प्राकृत साहित्य में वर्णित शील-सुरक्षा के उपाय

डॉ. हुकमचन्द जैन
(सहायक आचार्य,
जैन विद्या एवं प्राकृत विभाग,
सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर,
राजस्थान।)

भारतीय संस्कृति में नारी परम लावण्य एवं सौन्दर्य की प्रतिमूर्ति रही है। परिणामतः वह पुरुषों का आकर्षण केन्द्र बनी रही। प्राकृत साहित्य में वर्णित नारियाँ भी परमलावण्य एवं सौन्दर्य की खान रही हैं। यौवन अवस्था की देहली पर आरूढ़ होकर तरुणियाँ रति की तरह रूपवती दिखाई देने लगती हैं। ऐसी अनिन्द्य सुन्दरियों पर पुरुषों का आकर्षित होना स्वाभाविक है। किन्तु भारतीय नारियाँ ऐसे कामुक पुरुषों से संघर्ष करती हुई अपने शील को बचाने का प्रयत्न करती रही हैं। ऐसे उल्लेख आगमसाहित्य से लगाकर प्राकृत के स्वतन्त्र कथा ग्रन्थों तक में प्राप्त हैं। उनमें से शील-रक्षा के कतिपय प्रमुख उपाय इस प्रकार हैं—

१. दृष्टान्त-उद्बोधन द्वारा।
२. रौद्र रूप प्रदर्शन द्वारा।
३. रूप परिवर्तन द्वारा।
४. पागलपन के अभिनय द्वारा।
५. किसी विशेष युक्ति द्वारा।
६. समय-अन्तराल द्वारा।
७. आत्म-घात द्वारा।
८. लोक-निन्दा का भय दिखाकर।
९. पुरुषों द्वारा शील-रक्षा के उपाय।

(१) **दृष्टान्त-उद्बोधन द्वारा**—ज्ञाताधर्म कथा के मल्ली अध्ययन में विवाह के लिए आये हुए सातों राजकुमारों को एक साथ एकत्रित कर मल्ली स्वर्णमय प्रतिमा के दृष्टान्त द्वारा उद्बोधन करती है। उसकी संक्षिप्त कथा इस प्रकार है—

(क) विदेह राजकुमार मल्ली के रूप यौवन पर मुग्ध होकर अत्यन्त लालायित होकर अनिमेष दृष्टि से उसे देखने लगे। वे सब उससे विवाह करना चाहते थे। इसके लिये वे युद्ध करने के लिए तैयार थे। तब मल्ली अपने को असहाय एवं विकट परिस्थितियों में पा स्वर्ण-प्रतिमा में एकत्रित सड़े हुए भोजन की दुर्गन्ध का उदाहरण प्रस्तुत कर उन्हें सम्बोधित करती हुई कहती है कि—हे देवानुप्रियो! इस स्वर्णमयी प्रतिमा में प्रतिदिन अशन, पान, खादिम, स्वादिम आहार में से एक-एक पिण्ड डालते ऐसे अशुभ पुद्गलों का परिणमन हुआ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इमस्स पुण ओरालिय सरीरस्स खेलासवस्स वंतासवस्स पित्तासवस्स सुक्कसोणियपूयासवस्स दुरूवऊसासनीसासस्स दुरूवमुत्तपूतियपुरिस्सपुण्णस्स सडण जाव धम्मस्स ।[1]

अर्थात् यह एक औदारिक शरीर है, कफ को फराने वाला है, खराब उच्छ्वास एवं निश्वास को निकालने वाला है, मूत्र एवं दुर्गन्धित मल से परिपूर्ण है, सड़ना उसका स्वभाव है। अतः हे देवानुप्रियो ! आप ऐसे काम-भोगों से राग मत करो। इस उद्बोधन से राजकुमारों को वैराग्य हो गया। अशुचि पदार्थों के दृष्टान्त उद्बोधन देकर शीलरक्षा की कथा प्राकृत के स्वतन्त्र कथा-ग्रन्थों में भी मिलती है।

(ख) आचार्य नेमिचन्द्र सूरि कृत रयणचूडरायचरियं में कुलवर्द्धन सेठ की पत्नी अपने शील रक्षा का कोई उपाय नहीं देखकर दृष्टान्त उद्बोधन के लिए राजा कामपाल एवं मदनश्री की कथा सुनाती है। मदनश्री पर राजा विक्रमसेन आसक्त हो गया। उसने अपना प्रणय प्रस्ताव मदनश्री के पास भेजा। मदनश्री ने बड़ी कुशलता से काम लिया और राजा को अपने भवन में बुलवा लिया।

जब राजा भोजन करने के लिए बैठा और मनोहर वस्त्रों से ढकी हुई बहुत-सी थालियों को उसने देखा तो उसने सोचा—अहो ! मुझे प्रसन्न करने के लिए मदनश्री ने अनेक प्रकार की रसोई तैयार की है। इससे राजा खुश हो गया। मदनश्री ने सभी थालियों से थोड़ा-थोड़ा भोजन राजा को दिया। तब कौतूहल से राजा ने पूछा—अनेक थालियों में से एक ही प्रकार का भोजन रखने का क्या प्रयोजन ? तब मदनश्री ने कहा—'ऊपर से ढके हुए रेशमी वस्त्रों को दिखाने का प्रयोजन था।' तो राजा ने कहा कि इस प्रकार की व्यर्थ मेहनत करने से क्या लाभ ? जबकि भोजन एक ही था। तब मदनश्री ने कहा—जिस प्रकार से एक ही भोजन अलग-अलग थालियों में विचित्र दिखाई देता है उसी प्रकार बाहर के वेश से युवतियों का शरीर अलग-अलग दिखाई देता है किन्तु भीतर चर्बी, माँस, मज्जा, शुक्र, फिप्पिस, रुधिर, हड्डी आदि से युक्त अपवित्र वस्तुओं का भण्डार रूप सभी स्त्रियों का शरीर एक जैसा है। फिर भी पुरुष बाहरी रूप-सौन्दर्य पर मुग्ध हो जाता है। जैसे सभी भोजन का स्वाद एक जैसा है वैसे ही सभी स्त्रियों में एक जैसा ही आनन्द है। अतः अपनी पत्नी में ही सन्तोष कर लेना चाहिए। इस दृष्टान्त से राजा प्रतिबोधित हो जाता है।[2]

(ग) आचार्य नेमिचन्द्रसूरि ने अपने प्रसिद्ध कथाग्रन्थ आख्यानकमणिकोश में रोहिणी कथा में भी इसी तरह की कथा दी है। इसमें रोहिणी का पति धनावह सेठ धनार्जन के लिए विदेश चला जाता है। वहाँ का राजा रोहिणी पर मुग्ध हो उससे काम-याचना करता है। रोहिणी अपने शील रक्षा का अन्य उपाय न देखकर राजा को स्वयं अपने यहाँ बुलवा लेती है तथा राजा को मर्मस्पर्शी शब्दों में उपदेश देती है—

हे राजन ! अनीति में लगे हुए दूसरों को आप शिक्षा देते हैं किन्तु अनीति में लगे हुए आपको कौन शिक्षा देगा ? हे राजन् ! अनुराग के वश से थोड़े से किये गये अनुचित कार्य का भारी परिणाम जीवों को भोगना पड़ता है। यौवन की मदहोशी से बिना विचारे जो कार्य किये जाते हैं उन कार्यों के परिणाम हृदय को पीड़ा पहुँचाने वाले होते हैं। आपकी पीव, वसा, माँस, रुधिर, हड्डी (अशुचि पदार्थों) से भरी हुई इन महिलाओं के प्रति इतनी आसक्ति क्यों है और आप अपने कुल को कलंकित क्यों कर रहे हैं ? आप प्रजा के लिए पिता के समान हो। आपको ऐसा अनुचित कार्य नहीं करना चाहिए।

---

१. नायाधम्मकहा (मल्ली अध्ययन) पाथर्डी, १९६४

२. जैन, हुकमचंद, रयणचूडरायचरियं का आलोचनात्मक सम्पादन एवं अध्ययन—थीसिस १९८३ पृ० ५०६

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बहु-पूय-असुइ-वस-मंस रुहिर-परिपुरियाण महिलाण।
कज्जे किं कुणसि नरिंदं असरिस नियं-कुल-कलंक ।।

तब वह राजा इस उपदेश से प्रतिबोधित हो जाता।[1]

(घ) दृष्टान्त उद्बोधन से प्रतिबोधित नहीं होने की स्थिति में नारी एक कदम और आगे बढ़कर अर्थात् अशुचि पदार्थों को दिखाकर शील रक्षा करती हुई दिखाई देती है। उत्तराध्ययनसूत्र में राजीमती एवं रथनेमि की कथा वर्णित है। इस कथा में राजीमती पानी से भीगी हुई गुफा में प्रवेश करती है। उसके पूर्व ही रथनेमि वहाँ साधना कर रहे होते हैं। ऐसी अवस्था में राजीमती को देखकर उनकी आसक्ति तीव्र हो उठती है। तब वे राजीमती को कहते हैं :—

हे भद्रे ! हे कल्याणकारिणी ! हे सुन्दर रूप वाली ! हे मनोहर बोलने वाली ! हे सुन्दर शरीर वाली ! मैं रथनेमि हूँ। तू मुझे सेवन कर। तुझे किसी प्रकार की पीड़ा नहीं होगी। निश्चय ही मनुष्य जन्म का मिलना अत्यन्त दुर्लभ है। इसलिए हे भद्रे ! इधर आओ। हम दोनों भोगों का उपभोग करें। फिर मुक्तभोगी होकर बाद में जिनेन्द्र के मार्ग का अनुसरण करेंगे।

यह सुनकर राजमती हतप्रभ रह जाती है। वह रथनेमि को फटकारती हुई कहती है कि—

यदि तू रूप में वैश्रमण देव के समान और लीला-विलास में नलकूबर देव के समान हो। अधिक तो क्या यदि साक्षात् इन्द्र भी हो तो भी मैं तेरी इच्छा नहीं करती। अन्त में राजीमती रथनेमि को अपना वमन पात्र बताती हुई कहती है कि तुम इसे पी लो। तब रथनेमि कहता है कि यह अशुचि पदार्थ है।

इस पर राजीमती कहती है कि तब मुनि-दशा को छोड़कर काम-वासना रूपी संसार में घृणित पदार्थ रूपी वमन को तुम क्यों पीना चाहते हो ? संयम से विचलित मनुष्य का जीवन उस हरड़ वृक्ष के समान है जो हवा के एक छोटे से झोंके से उखड़ कर नदी में बह जाता है। वैसे ही संयम से शिथिल होकर तुम्हारी आत्मा भी उच्च पद से नीचे गिर जायेगी और संसार समुद्र में परिभ्रमण करती रहेगी।[2]

जइ तं काहिसि भावं जा जा दिच्छसि नारीओ।
वाया-इद्धो व हडो, अट्ठिअप्पाभविस्ससि ।।

—उत्तराध्ययन सूत्र, अध्ययन २२, सैलाना, १९७४

यह कथा अन्य प्राकृत ग्रन्थों में भी कुछ हेर-फेर के साथ मिलती है।[3]

(२) **रौद्ररूप प्रदर्शन द्वारा**—उपदेश एवं दृष्टान्त उद्बोधन द्वारा भी यदि कामी पुरुष नहीं मानता है और बलात् शील खण्डन करना चाहता है। उस समय नारी अपना विकट रूप धारणकर गर्जना करती है और तब कामी पुरुष डरकर हट जाता है। ऐसी एक कथा आवश्यक निर्युक्ति में मिलती है।

चण्डप्रद्योत राजा की शिवा रानी पर उसका मन्त्री भूतदेव मोहित हो जाता है। एक बार

---

१. जैन, प्रेम सुमन, "रोहिणी कथानक" साहित्य संस्थान, उदयपुर १९८६, पृ० २४ से २७

२. (क) उत्तराध्ययन सूत्र, अध्ययन २२, सैलाना, १९७४
   (ख) जैन, जगदीश चन्द्र, जैन आगम साहित्य में भारतीय समाज, चौखम्बा, वाराणसी, १९६५, पृ० २५१

३. (क) दशवैकालिक सूत्र—२, ७-११
   (ख) दशवैकालिकचूर्णी २ पृ० ८७

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एकान्त अवसर एवं राजा की अनुपस्थिति देखकर, रनिवास में प्रवेश कर वह रानी से काम-याचना करता है। रानी पहले उसे उद्बोधन देती है। तब भी वह काम के लिए लपकता है। तब शिवा रानी में अद्भुत शक्ति एवं साहस का संचार हो जाता है। वह बिजली की तरह त्वरितगति से कुछ चरण पीछे हटी एवं प्रलयंकर मेघों के समान गर्जना करती हुई उस मन्त्री पर बरस पड़ी। वह बोली—कामी-कुत्ते ! वहीं ठहर जा। खबरदार जो एक चरण भी आगे बढ़ा। तू तो है ही क्या ? इन्द्र स्वयं भी प्रयत्न करे तो भी मुझे शील से खण्डित नहीं कर सकता। अवन्ती नरेश का मित्र होने का तू दावा करता है और उन्हीं से यह भयंकर छल करते हुए तुझे लज्जा नहीं आती। ऐसे चण्डी रूप को देखकर वह मन्त्री डरकर भाग खड़ा होता है और शिवारानी अपने शील की रक्षा कर लेती है।[1]

(३) **रूप परिवर्तन द्वारा**—नारी विचित्र औषधि प्रयोग एवं रूप परिवर्तन से भी अपने शील की सुरक्षा कर लेती है। ऐसी ही एक कथा रूपवती तारा की है। चन्द्र एवं उसकी पत्नी तारा को घर छोड़ने के लिए कहा गया। वे ताम्रलिप्ती नगर में एक माली के घर रहने लगे। तारा को एक दिन परिव्राजिका के दर्शन हुए। परिव्राजिका ने उसे एक गोली दी जिसके प्रभाव से स्त्री पुरुष और पुरुष स्त्री बन जाय। एक बार वहाँ का राजा तारा पर मोहित हो गया और कहने लगा—प्रिये ! तेरे विरह की अग्नि से मेरा अंग-अंग झुलस रहा है, अपने संगम-सुख से उसे शान्त कर। ऐसा कहकर राजा ने ज्योंही उसे आलिंगन-पाश में बाँधना चाहा, उसने तुरन्त दूर होकर कहा—महाराज ! यह क्या ? राजा अपने सामने एक पुरुष को खड़ा देखकर लज्जित हो जाता है और वह रूप-परिवर्तन द्वारा अपने शील की रक्षा करती है। नारियाँ अपने को असहाय अनाथ समझकर, कोई बहाना बनाकर, नाटकीय ढंग से अपनी शील रक्षा करती हुई देखी गयी हैं।[2]

(४) **पागलपन के अभिनय द्वारा**—नर्मदासुन्दरी उसके चाचा वीरदास की अंगूठी के बहाने बुलाकर कैद कर ली जाती है और वेश्या बनाने के लिए उसे कितनी ही पीड़ाएँ सहनी पड़ती हैं किन्तु वह वेश्या नहीं बनती। तब उसे रसोईघर में काम मिल जाता है। लेकिन शील खण्डन का संकट पुनः खड़ा हो जाता है। अत्यन्त रूपवती होने के कारण राजा उसे बहुत चाहने लगता है। राजा दण्डरक्षक को भेजकर नर्मदासुन्दरी को बुलाता है। तब रास्ते में ही पानी की एक बावड़ी देखकर नर्मदा को पालकी से उतार दिया। लेकिन बावड़ी के पास पहुँचते ही वह फिसल कर गिर पड़ती है। उसके बाद वह अट्टहासपूर्वक चिल्लाकर कहने लगी—क्या राजा ने मेरे लिए यही आभूषण भेजा है ? उसने अपने शरीर पर कीचड़ लपेट लिया। दण्डरक्षक ने कहा—अरी स्वामिनी ! यह क्या ? वह उसकी ओर बढ़ा। नर्मदा ने उत्तर दिया—अरे तू राजा की रानी को अपनी रानी बनाना चाहता है ? यह कहकर दण्डरक्षक के मुंह पर कीचड़ फेंकने लगी। भूतनी-भूतनी का शोर मच गया। नर्मदा नेत्रों को फाड़, जीभ निकाल, गीदड़ की

---

१. (क) शास्त्री, राजेन्द्र मुनि "सत्य-शील की अमर साधिकाएँ", उदयपुर १९७७, पृ० १३०
(ख) आवश्यक निर्युक्ति, गा० १२८४ पृ० १३०

२. (अ) जैन जगदीश चन्द्र, रमणी के रूप, वाराणसी, पृ० २१-२५
(ब) जैन, जगदीशचन्द्र, "नारी के विविध रूप" वाराणसी, १९७८, पृ० ६०
(स) वसुदेव हिण्डी, (संघदासगणि), भावनगर, २३३
(द) जैन, जगदीश चन्द्र, प्राकृत जैन कथा साहित्य, अहमदाबाद, १९७१, पृ० ४८

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बोली बोलती हुई भीड़ की ओर दौड़ी। दण्डरक्षक ने राजा के पास पहुँचकर सब हाल सुनाया। राजा उसे पागल मानकर छोड़ देता है। और इस प्रकार नर्मदा अपने शील को बचा लेती है।[1]

(५) **किसी विशेष युक्ति द्वारा** – किसी विचित्र युक्ति द्वारा भी प्राकृत साहित्य में शील रक्षा के उपाय वाले दृष्टान्त मिलते हैं। युक्तिपूर्ण तरीके से शील सुरक्षा करने की कथा कुमारपाल प्रतिबोध नामक ग्रन्थ में मिलती है। कथा इस प्रकार है—

एक बार अजितसेन की पत्नी शीलवती की राजा ने परीक्षा लेनी चाही। उसने एक-एक करके चार युवकों को उसके पास भेजा। उन चारों युवकों ने शीलवती से काम-भोग की प्रार्थना की। नहीं मानने पर उन चारों ने शीलवती को धमकाया। जब उसे यह अनुमान हुआ कि यह पूर्वनियोजित योजना है। इससे कभी भी शील भंग हो सकता है। तब उसने एक युक्ति का सहारा लिया। वह सहसा अपने व्यवहार में कोमल हो गयी। उसके वार्तालाप में सहज अनुराग का स्वर आ गया। उसने उन चारों युवकों को पृथक-पृथक रूप से अपनी स्वीकृति दे दी। उसने सन्ध्या के समय एक उद्यान में चारों को बुलाया गया। पूर्ण नियोजित ढंग से उसने उन चारों को एक कुए में धकेल कर बन्दी बना लिया। इस प्रकार विशेष युक्ति द्वारा उसने अपने शील की रक्षा कर ली।[2]

(६) **समय-अन्तराल द्वारा**—युक्ति, अभिनय, रूप परिवर्तन एवं अन्य उपायों द्वारा शील-रक्षा का कोई उपाय नहीं दिखाई देने पर नारियों द्वारा कामुक व्यक्तियों की प्रणय-याचना को स्वीकार कर उनसे कुछ समय का अवकाश माँगकर अपनी शील रक्षा की जाती थी। इस प्रकार की कथा इस प्रकार है। ज्ञाताधर्म कथा में, द्रौपदी की कथा वर्णित है जिसमें द्रौपदी राजा पद्मनाभ द्वारा अपहरण कर ली जाती है। राजा उसे अन्तःपुर में लाकर उससे कामना-प्रार्थना करता है। तब द्रौपदी पद्मनाभ से इस प्रकार कहती है—

हे देवानुप्रिय ! द्वारवती नगरी में कृष्ण नामक वासुदेव मेरे स्वामी के भ्राता रहते हैं। यदि वे छः महीने तक लेने के लिए यहाँ नहीं आयेंगे तो हे देवानुप्रिय ! आप जो कहेंगे वही मैं करूँगी।[3]

इस प्रकार समय माँगने की कथाएँ परवर्ती प्राकृत साहित्य में भी मिलती है यथा—

(१) सती मृगावती एवं चण्डप्रद्योत की कथा।[4]

(२) तिलकसुन्दरी एवं मदनकेशरी की कथा।[5]

(३) जयलक्ष्मी एवं विजयसेन की कथा।[6]

(४) रत्नवती एवं रुद्रमंत्री की कथा।[7]

---

१. (अ) जैन जगदीश चन्द्र, नारी के विविध रूप, पृ० २६-२७
(ब) शास्त्री, नेमिचन्द्र, वाराणसी, १९६६, पृ० ४९४

२. शास्त्री राजेन्द्र मुनि, सत्यशील की अमर साधिकाएँ, पृष्ठ २२६।

३. (अ) णायाधम्मकहा (१६ वाँ अध्ययन) पाथर्डी, पृ० ४९९-५००
(ब) शास्त्री, राजेन्द्र मुनि, सत्यशील की अमर साधिकाएँ, पृ० ७७-७९।

४. वही, पृ० ११०, पर उद्धृत, आवश्यक निर्युक्ति, गा०, १०४८ एवं दशवैकालिक निर्युक्ति-अ० १ गा० ७

५. जैन, हुकुमचन्द, "रयणचूडरायचरियं का आलोचनात्मक सम्पादन एवं अध्ययन" थीसिस १९८३, अनु० ६९ पै० २-३।

६. प्राकृत कथा संग्रह, सूरत, १९५२, पृ० १७, गा० ९०-९५

७. वही पृ० २ गा० ५०-६०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(७) **आत्मघात द्वारा**—शील रक्षा का कोई उपाय नहीं दिखाई देने पर शीलवती नारियाँ आत्मघात करने के लिए प्रवृत्त हो जाती हैं किन्तु शील खण्डित नहीं होने देतीं। ऐसी कथाओं में सती चन्दना की कथा प्रसिद्ध है।[1]

कभी-कभी कोई कामी व्यक्ति अपने घर में ही अपने छोटे भाई की पत्नी के साथ उदाहरणार्थ—राजा मणिरथ अपने छोटे भाई की पत्नी; तो कभी पुत्रवधु तो कभी निकटतम सम्बन्धियों की स्त्रियों के साथ अपनी काम-भावना व्यक्त करने लगते हैं। ऐसी विकट परिस्थितियों में भी नारी ने अपने शील की रक्षा की है। ऐसी ही एक कथा सत्य शील की अमर साधिकाएँ नामक पुस्तक में वर्णित है।

(८) **लोक-निन्दा का भय दिखाकर**—राजा मणिरथ अपने छोटे युगबाहु की पत्नी मदनरेखा पर आसक्त था किन्तु मदनरेखा इस बात से अनभिज्ञ थी। वह बड़े भाई (राजा) को पिता की तरह मानती थी किन्तु कामाभिभूत राजा कई प्रकार के उपहार उसे भेजता रहता था। उसे राजा के प्रति किंचित मात्र शंका नहीं थी। एक दिन राजा उसे अकेली समझकर उसके भवन में चला गया और और काम-भावना दर्शाने लगा। तब मदनरेखा उस बात को भाँप गयी। उसने राजा को ललकार कर भगा दिया। राजा उसे कई बार प्राप्त करने का प्रयत्न करता है किन्तु लोक-निन्दा का भय दिखाने पर वह विफल हो जाता है।[2]

(९) **पुरुषों द्वारा शील-सुरक्षा**—प्राकृत साहित्य में ऐसी कथाएँ भी मिलती हैं जिसमें स्त्री पुरुषों से काम-याचना करती है। पुरुष उपदेश द्वारा या अन्य उपायों द्वारा अपनी शील वृत्ति का पालन करते हैं। यथा—

(क) 'समराइच्चकहा' के पंचम भव में ऐसी ही एक कथा वर्णित है जिसमें सनत्कुमार अपने पिता से रुष्ट होकर घर से चला गया। एक बार ताम्रलिप्ति में विलासवती के भवन के समीप से निकला दोनों एक-दूसरे पर मोहित हो गये। ये प्रेम-प्रसंग चल ही रहा था कि एक दिन प्रेमिका की सौतेली माता रानी अनंगवती ने सनत्कुमार को अपने पास बुलाया और स्वयं उससे प्रेम याचना की किन्तु सनत्कुमार ने उसकी बात को अस्वीकार करके अपने शीलव्रत का पालन किया।[3]

(ख) ऐसी ही एक कथा समराइच्च कहा के अष्टम भव में भी आयी है जिसमें रत्नवती की को अज्ञान चेष्टा के फल के उदाहरण में गजिनी रत्नावती के पूर्व भव की कथा कही गयी है।[4]

(ग) ऐसी ही एक कथा आख्यानक मणिकोश में भी मिलती है जिसमें सुदर्शन अपने को नपुंसक बताकर अपने शील की सुरक्षा कर लेता है।

एक बार कपिल घर पर नहीं थे तब उसकी पत्नी कपिला ने अवसर देखकर सुदर्शन सेठ से काम भोग की प्रार्थना की। तब सुदर्शन सेठ अपने शील की सुरक्षा करता हुआ कहता है—मैं तुम्हें चाहता हुआ भी नपुंसक हूँ। ऐसा कहता हुआ वह वहाँ से भाग निकला। यथा:—

---

१. आख्यानकमणिकोश (नेमिचन्द्र) पृ० ३६, गा० ६-७
२. शास्त्री, राजेन्द्र मुनि, "सत्य-शील की अमर साधिकाएँ", पृ० १५६-१५७
३. वही पृ० १८४-१९१
४. जैन रमेश चन्द्र, समराइच्चकहा (अष्टम भव), मेरठ १९८०, पृ० ६०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भणियं सविसाएणं सुयणु समीहेमि संगयं तुज्झ ।
किंतु नियदुक्कियकम्मेण निम्मिओ पंडओ अहयं ॥

—आ. म. को. पृ. १४२

डा० हीरालाल जैन ने "सुदंसणचरिउ" की भूमिका में पुरुष द्वारा शील-रक्षा के उपायों के कई सन्दर्भ भारतीय साहित्य से खोज कर प्रस्तुत किये हैं ।[1]

प्राकृत साहित्य में उपलब्ध शील-रक्षा के उपर्युक्त उपायों के प्रसंगों से स्पष्ट है कि भारतीय समाज में शील का पालन करना एक महत्वपूर्ण जीवन मूल्य रहा है । भारतीय नारी का शील एक ऐसा आभूषण माना गया है, जो उसे भौतिक आभूषणों से अधिक सुशोभित करता है । इसीलिए शील की महिमा सर्वत्र गायी गयी है । इस विवरण से यह भी प्रकट होता है कि भारतीय नारी संघर्षशीला रही है । वह संकटों से घबड़ाती नहीं है । ये प्रसंग इस बात की शिक्षा देते हैं कि नारी केवल भोग्या नहीं है । उसका भी अपना सम्मान एवं स्वतन्त्र व्यक्तित्व है । पुरुषों को उसकी रक्षा करनी चाहिए । यही बात नारी को भी सोचनी चाहिए कि वह भौतिक सुख से ऊपर उठे । प्राकृत साहित्य का शील, सदाचार, पुरुषार्थ, आत्मनिर्भरता आदि जीवनमूल्यों की दृष्टि से अध्ययन किया जाना चाहिए ।

१. जैन हीरालाल, सुदंसणचरिउ, वैशाली—१९७० भूमिका पृ० १८-२३

○○

नारी के विविध रूप

गाहा कुला सुदिव्वा व भावका मधुरोदका ।
फुल्ला व पउमिणि रम्मा बालक्कंता व मालवी ॥
हेमा गुहा ससीहा वा, माला वा वज्झकप्पिता ।
सविसा गंधजुत्ती वा अन्तो दुट्ठा व वाहिणी ॥
गरंता मदिरा वा वि जोगकण्णा व सालिणी ।
नारी लोगम्मि विण्णेया जा होज्जा सगुणोदया ॥

—इसिभासियाइं २२, २, ३, ४

नारी सुदिव्य कुल की गाथा के सदृश है, वह सुवासित मधुर जल के समान है, विकसित रम्य पद्मिनी (कमलिनी) के समान है और व्याल से लिपटी मालती के समान है ।

वह स्वर्ण की गुफा है, पर उसमें सिंह बैठा हुआ है । वह फूलों की माला है, पर विष पुष्प की बनी हुई है । दूसरों के संहार के लिए वह विष मिश्रित गंध-पुटिका है । वह नदी की निर्मल जल-धारा है, किन्तु उसके बीच में भयंकर भँवर है जो प्राणापहारक है ।

वह मत्त बना देने वाली मदिरा है । सुन्दर योग-कन्या के सदृश है । यह नारी है, स्वगुण के प्रकाश में यथार्थ नारी है ।

—●—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org